पूज्य श्री लालचंदभाई का प्रवचन
भिंड, ता. ५-४-१९८९
श्री समयसार, गाथा १३, प्रवचन नंबर P०८

यह श्री समयसारजी परमागम शास्त्र है| जो शुद्ध आत्मा को बतानेवाला शास्त्र है| दृष्टि के विषय का दान दिया कुंदकुंद आचार्य भगवान ने| दृष्टि का विषय जो शुद्ध आत्मा है, वह दान दिया है सबको। जो दृष्टि का विषय का दान दिया है, साथ, साथ में परिणामों का यथार्थ ज्ञान भी कराया है| क्या कहा? दृष्टि का विषय तो केवल शुद्धआत्मा (है), जो नवतत्व है परिणामरूप, उससे रहित है| आत्मा अरूपी होने से आर-पार दिखता है, आड़ तो सब पुद्गल की है| पुद्गल तो आत्मा है ही नहीं, आहाहा!

यह समयसारजी परमागम शास्त्र है| दृष्टि के विषय का दान दिया है| और दृष्टि के विषय का दान तो दिया है, मगर नवतत्व के यथार्थ स्वरूप का ज्ञान भी साथ-साथ में कराया है| अयथार्थ का परिहार कराया है, अभूतार्थनय से कहा हुआ नवतत्व, उसका परिहार कराया है, और नवतत्व का यथार्थ भूतार्थनय से ज्ञान कराया है और दृष्टि का दान दिया है| आहाहा! ऐसे समयसार शास्त्र परमागम भारत का भगवान है| अद्वितीय शास्त्र है, इसमें १३ नंबर की गाथा है| इसकी १३ नंबर की गाथा का भावभासन होता है, उसको १३ वां गुणस्थान, केवलज्ञान जल्दी ही आ जाता है| बहुत लेट नहीं होता हे, ऐसी अपूर्व गाथा है| उसमें आचार्य भगवान ने फरमाया कि अभूतार्थनय से तो नवतत्व तूने जाना, अनंतबार जाना। नव तत्व का ज्ञान, व्यवहारनय से नवतत्व का ज्ञान कोई अपूर्व लब्धि नहीं है। व्यवहारनय से नवतत्व से जानना, वो तो सामान्य है| वो ही नवतत्वों का ज्ञान भूतार्थनय से करने से कर्तृत्वबुद्धि छूट जाती है और अकर्ता ऐसे ज्ञायक पर द्रष्टि आ जाती है, अनुभूति होती है, तो कर्ताबुद्धि छूटती है| कर्तुत्वबुद्धि छूटी तो अनुभव हुआ और नवतत्व का ज्ञान होता है, कि होने योग्य होता है, मैं करनेवाला नहीं| आहाहा! परिणाम अपने आप अपने स्व अवसर में, स्वकाल में, उसकी काललब्धि के काल में, काल यह बाहर का काल की बात नहीं है, वो पर्याय का स्वकाल होता है, उत्पाद का, पर्याय के उत्पाद का नाम स्वकाल है, उसका स्वकाल होता है तभी पर्याय उत्पन्न होती है, उसको कोई करनेवाला नहीं है| ऐसा भूतार्थनय से नवतत्व का ज्ञान भी कराया है, और शुद्ध आत्मा का दान भी दिया है| आहाहा! ऐसी अपूर्व गाथा है, वह चलती है अभी|

जो व्यवहारनय से कहा हुआ नवतत्व, उसका नाम, जिन के लक्षण जीव, तो यह जीव है ना, वह व्यवहार जीव है| जीव शब्द है वह व्यवहार जीव है, पर्याय, सब पर्याय का भेद है, नौ -अजीव, पुण्य, पाप, आस्रव, संवर, निर्जरा, बंध, मोक्ष है। उनमें एकत्व प्रगट करनेवाले, नौ में से एक को निकालो, नौ को जानना, भेद को जानना तो व्यवहार है और नवतत्वों का लक्ष छोड़कर उस में छुपी हुई आत्मज्योति है, उसका अन्तर्मुख होकर ज्ञानानंद परमात्मा का लक्ष करना, उसका नाम अनुभूति है| वह शुद्धनय से शुद्धात्मा जानने में आता है| व्यवहारनय से जानने में आता नहीं, क्योंकि व्यवहारनय का विषय पर है,

और निश्चयनय का विषय स्वद्रव्य है| अशोकजी| अशोक है ने नाम?

क्या कहा? नौ तत्व है ना, भेद, वह पर्याय है, व्यवहारनय का विषय है| जो नय भेद को प्रसिद्ध करती है, वह ज्ञान अभेद को प्रसिद्ध कर सकता नहीं| ज्ञान ही बदल जाता है, विषय बदलता है तो ज्ञान भी बदल जाता है| पाटनीजी| यह पुण्य है, पाप है, आस्रव है, संवर है, निर्जरा है, बंध है, वह नौ प्रकार का ज्ञेय है, नौ प्रकार का ज्ञेय है, एक प्रकार का नहीं है| पुण्य पाप एक ज्ञेय और आस्रव दूसरा ज्ञेय, संवर दूसरा ज्ञेय, ज्ञेय है ना, एक-एक पर्याय ज्ञेय है। तो वह जो व्यवहारनय है, एक-एक तत्व को जानती है, तो उसका नाम व्यवहारनय है।

भेद को जाने वो व्यवहार और जिस नय से भेद जानने में आता है, ऐसे व्यवहारनय से आत्मा का अनुभव होता नहीं है| वह ज्ञान बदल जाता है| जो भेद के सन्मुख ज्ञान था, वह भी ज्ञान वहाँ से फिर गया, अंदर में आता है, तो जो ज्ञान अन्तर्मुख हुआ, उसमें नौ का भेद दिखाई देता नहीं है| नौ की अस्ति होने पर वह नौ तत्व, ध्यान का ध्येय तो नहीं, मगर ज्ञान का ज्ञेय भी नहीं| अनुभव के काल की बात बताता हूँ| आहाहा! क्या कहा? कि जो नवतत्व का भेद है, उसके ऊपर नजर रखता है कोई, रखता है, नव का भेद के ऊपर लक्ष करता है, तो भेद के लक्ष से अभेद का ज्ञान नहीं होता है| भेद को जानकर भेद का लक्ष छोड़ना पड़ेगा, जो आत्मा का दर्शन करना हो, तो| भेद को जानना चालू रखे, परद्रव्य को जानना चालू रखे, नवतत्व पर द्रव्य है, उसको जानना चालू रखे और स्वद्रव्य जानने में आए, ऐसा बनने वाला है नहीं। तो नव तत्व को जानने वाली एक व्यवहार नय, उसकी चक्षु बंध कर दे।

कर्ता तो है ही नहीं, इसलिए कर्ता बंध कर दे, ये तो एजंडा पर है ही नहीं। क्योंकि अकर्ता को कोई कर्म नहीं होता है, ऐसे ज्ञाता का कोई कर्म होता नहीं। ज्ञाता में कोई नवतत्व का भेद ज्ञेय तो होता है, मगर नवतत्व कर्म होता नहीं| आहाहा! तो ये नवतत्व हैं, उसके ऊपर से लक्ष हटा दे| हट जाता है, लक्ष तो, स्वयं इधर ढलता है उपयोग, तब वहाँ से लक्ष हट जाता है। यह तो सब को अनुभव है, थाली में जो आया सब (चीज़ें), तो जब लड्डू के ऊपर है लक्ष, तो सब्जी पर नहीं है, (जब) सब्जी पर है तो लड्डू पर नहीं है, यह तो सब को मालूम है कि नहीं? तो वो वहाँ लक्ष था, अनंतकाल से भेद पर, परद्रव्य पर लक्ष था वो मिथ्यादृष्टि है| आहाहा! परद्रव्य को जानने से अध्यवसान नामक पाप का जन्म होता है, अज्ञानी के लिए। ऐसा पाठ है समयसार में| छ द्रव्य, धर्मास्तिकाय आदि को मैं जानता हूँ, अध्यवसान भावबंध है भैया! तेरे आत्मा को तू जान। आत्मा को छोड़कर उसको क्यों जानता है? आहाहा!

ऐसे नवतत्व का भेद का लक्ष छोड़कर, अभी क्या फरमाते हैं आचार्य महाराज कि उनमें एकत्व प्रगट करनेवाले भूतार्थनय से, यानि सत्यार्थनय से, यानि अंतर्मुखी ज्ञान से बहिर्मुख ज्ञान में नव का भेद मालूम पड़ता था, तो भगवानआत्मा का स्वभाव तिरोभूत हो जाता था, दिखने में आता नहीं था| अब वह नवतत्व का भेद का लक्ष छूट गया, साथ में इन्द्रियज्ञान भी रुक गया, साथ में इंद्रियज्ञान रुक गया और अभिमुख ज्ञान नया अनंतकाल से नहीं प्रगट हुआ, ऐसा प्रगट हुआ, तो उसका नाम शुद्धनय है| जो शुद्ध को प्रसिद्ध करे, उसका नाम शुद्धनय है|

तो भूतार्थनय से एकत्व प्राप्त करके, मैं एक हूँ| एकत्व प्रगट करनेवाले भूतार्थनय से एकत्व प्राप्त करके, क्या कहा, एकत्व प्रगट करनेवाले कि मैं एक हूँ, ऐसा प्रगट करनेवाले भूतार्थनय, अंतर्मुखी ज्ञान,

अंतर्मुखी ज्ञान हुआ तो एकत्व प्राप्त हो गया। आहाहा! एक शुद्ध आत्मा मैं हूँ, ऐसा अनुभव हो जाता है। वह अनुभव के काल में, निर्विकल्प ध्यान में, सम्यकदर्शन का जन्म होता है। अनादि मिथ्यादृष्टि जीव को विकल्प अवस्था में अनुभूति नहीं होती, अनुभूति के बिना सम्यग्दर्शन का जन्म होता नहीं है| एकत्व प्राप्त करके यानि मैं एक हूँ, एको अहम् आहाहा! मैं शुद्ध चिद्रूपो अहम्। मैं कौन हूँ? शुद्ध चिद्रूप परमात्मा हूँ। आहाहा! परमात्मा हैं सब आत्मा, है तो ज्ञान में आ जाता है, उसके लिए उसको टाइम के लिए टेलीफोन करना नहीं पड़ेगा, पत्र लिखना नहीं पड़ेगा, वो तो हाजराहजूर प्रत्यक्ष परमात्मा विराजमान है|

तेरी दृष्टि इधर (परमें) है और भेद पर है। बहुतों का (उपयोग) तो प्रमाण से बाहर ही भटकता है| ज्यादातर, तो प्रमाणज्ञान का जो विषय द्रव्यपर्याय स्वरूप वस्तु है, उससे बाहर ही भटकता है| ऐसा किया, उसने ऐसा किया, इसने ऐसा है, अरे! ऐसा कैसा की तू छोड़ दे बात। आहाहा! तू तो वर्तुल से बाहर चला गया, तेरा वर्तुल जानने के लिए, वह तो द्रव्य पर्याय रख पहले, पहले। शुरुआत में। पर का जानना तो बंद कर दे| आहाहा!

गुरुदेव ने तो वहाँ तक कहा, (कि) एक दफा बात आयी, गुरुदेव के सामने, इंदौर में खरडा पसार किया| अज्ञानी एकट्ठा होता है ना तो ठराव करता है ना। उसको नहीं गमे तो ठराव कर दे, एक द्रव्य दूसरा द्रव्य का कर्ता नहीं है (ऐसा सुनकर), (अज्ञानी ने कहा) तो कर्ता (तो) है, और कर्ता नहीं है, ऐसा कोई कहता है तो दिगंबर जैन नहीं है| ठराव पास कर दिया सब ने सही कर दिया| समझे? अज्ञानी ने ठराव किया, कर्ताबुद्धि का घट्ट कर दिया, कर्ताबुद्धि को पुष्ट कर दिया| उसके सामने, गुरुदेव ने १३ व्याख्यान का एक पुस्तक है, सारी ज़िन्दगी पढ़ने जैसा है| अध्यात्म प्रवचन रत्नत्रय! इसमें ९ व्याख्यान ३२० समयसार की गाथा पर हैं, ३ व्याख्यान प्रवचन सार की ११४ गाथा पर हैं, एक व्याख्यान २७१ कलश पर है, कलश पर है, वह राजमलजी की टीका है। राजमलजी की टीका है, उसके ऊपर गुरुदेव का व्याख्यान, १३ व्याख्यान, तेरह पंथ (है) तो १३ व्याख्यान कहते हैं| आहाहा!

और जिसको अल्पकाल में केवलज्ञान होनेवाला है, इसलिए १३ का अंक आ गया, समझे? शुकन वंता है। बिक्री में है, खरीदने जैसा है| और १०० साल की उम्र हो जाए, तब तक वह पढ़ने जैसी चीज है| ध्येय का स्पष्ट स्वरूप इसमें आया। ध्यान कैसे करें? आजकल ध्यान की शिविर लगती है। मगर ध्येय क्या? मालूम नहीं, और ध्यान कैसे होवे? वो भी मालूम नहीं। आहाहा! और ध्येय का जब ध्यान होता है, तब आत्मा ध्याता बन जाता है| ध्याता, ध्यान, ध्येय, ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय, ऐसी एकता होती है ना। आहाहा! छहढाला में आता है| आता है ना पंडित जी? ऐसे, ये भूतार्थनय से एकत्व प्राप्त करके एक शुद्धआत्मा में हूँ, ऐसा दृष्टि में आता है| शुद्धनयरूप से स्थापित आत्मा की अनुभूति, शुद्धनय के द्वारा जैसा शुद्धआत्मा है, ऐसा अनुभव हो जाता है|

उस टाइम में उस समय में, जो शुद्धआत्मा उपादेयरूप से जानने में आता है उसका नाम स्व प्रकाशक है| क्या कहा? स्वप्रकाशक लक्षण से आत्मा की उपलब्धि होती है| स्वपरप्रकाशक के बारे में बहुत चर्चा हुई। कि स्वप्रकाशक लक्षण से आत्मा लक्षगत होता है, ऐसा नियमसार का पाठ है| उपादेय तत्व में स्वपर उपादेय नहीं है, इसीलिए स्वपर में आत्मा की अनुभूति नहीं है| स्वपर उपादेय हो तो, द्रव्य और पर्याय स्वपर उपादेय नहीं है, अकेला सामान्य स्वभाव उपादेय है, उसका का विषय करनेवाला भी

स्वप्रकाशक ज्ञान होता है| उसमें अनुभव होता है| और अनुभव हुआ तो वो ही टाइम स्वपरप्रकाशक ज्ञान, निश्चय से स्वपरप्रकाशक प्रगट होता है| ज्ञान ज्ञायक को जानता है वह स्व, और ज्ञान आनंद को भी जानता है। तो आनंद है वह पर है, ज्ञान की अपेक्षा से आनंद पर है, तो स्वपरप्रकाशक अनुभूति के काल में निर्विकल्प ध्यान में, निश्चय स्वपरप्रकाशक प्रगट होता है ज्ञान| और बाहर आता है साधक, तो स्व आत्मा और देव-गुरुशास्त्र पर, लोकालोक पर, ऐसा स्वपरप्रकाशक का व्यवहार प्रगट होता है| निश्चय स्वपरप्रकाशक जिसको प्रगट हो, उसको स्वपरप्रकाशक व्यवहार है| स्वपरप्रकाशक भी कथंचित है, सर्वथा नहीं है| जगत स्वपरप्रकाशक को सर्वथा मान बैठा है| स्वपरप्रकाशक क्या स्वरूप है? यह स्व और ये पर, व्यवहार का पक्ष है| व्यवहार तो नहीं है अज्ञानी के पास, क्योंकि निश्चय स्वपरप्रकाशक प्रगट हुए बिना, व्यवहार स्वपरप्रकाशक का जन्म होता नहीं है| यह सब शास्त्र में है, मगर फुर्सत किसको है? आहाहा! जिसको फुर्सत है उसका काम हो जाता है|

तो शुद्धनयरूप से स्थापित आत्मा की अनुभूति, आत्मा का प्रत्यक्ष अनुभव होता है| आहाहा! वेदन प्रत्यक्ष है आत्मा, प्रदेश प्रत्यक्ष भले ना हो, मगर वेदन प्रत्यक्ष है। जैसा अंधा शक्कर खाता है, तो प्रत्यक्ष है या परोक्ष? प्रत्यक्ष है, ऐसा टोडरमल जी साहब ने दृष्टांत दिया है| अनुभूति जिसका लक्षण आत्माख्याति है| आत्मा की प्रसिद्धि हो जाती है। ओहोहो! मैं चिदानंद आत्मा हूँ। आहाहा! संसार का अंत हो जाता है| वह प्राप्त होती है, अनुभूति प्राप्त होती है| शुद्धनय से, नवतत्व को जानने से, आत्मा की अनुभूति होती है| फिर से दोहराया कोष्ठक में, कि भूतार्थनय से नवतत्व को जाना, तो सम्यग्दर्शन होता है। इधर कोष्ठक किया, शुद्धनय से नवतत्व को जानने से आत्मा की अनुभूति होती है| इस हेतु से यह नियम कहा, नियम, व्यवहारनय से नवतत्व को जाना, है तो व्यवहारनय का विषय, व्यवहारनय का विषय को तू भूतार्थनय, निश्चयनय से जान, कि वह स्वयं प्रगट होता है, कोई उसका करनेवाला नहीं है|

वहाँ, अभी आगे, वहाँ, विकारी होने योग्य, आहाहा! एक-एक शब्द की कीमत है। वहाँ विकारी होने योग्य और विकार करनेवाला, पुण्य या पाप का परिणाम जो होता है, वह होने योग्य होता है, करने से प्रगट नहीं होता है। कोई कर्ता ही नहीं उसका, सत का कोई करनेवाला होता नहीं है, सत स्वयं है, स्वयं उत्पन्न होता है और स्वयं व्यय हो जाता है| तो होने योग्य विकारी, विकारी होने योग्य, आहाहा! थवा योग्य, होने योग्य, वह क्षणिक उपादान है| क्या कहा? नैमित्तिक नहीं है। पहले, पुण्य पाप को नैमितिक मत देखो| निमित्त के लक्षवाले को नैमित्तिक दिखता है, शुद्धआत्मा के लक्षवाले को क्षणिक उपादान दिखता है| क्या कहा? पहले तो जगत में कोई निमित्त ही नहीं है, ऐसा ले लो। क्या कहा? सब उपादान है। त्रिकाल उपादान और क्षणिक उपादान दो प्रकार है। निमित्त की स्थापना करने से नैमित्तिक पर्याय दिखती है और नैमित्तिक दिखती है, तो उसका करता मैं हूं ऐसा दिखाई देता है। क्या कहा? निमित्त के लक्ष से पुण्य पाप होता है, वह निमित्त है और पुण्य-पाप नैमित्तिक है, जिसको पर्याय नैमित्तिक दिखती है, वह उसका ज्ञाता नहीं रह सकता है, कर्ता बन जाता है| और जिसको भूतार्थनय से होने योग्य है, ऐसा जानता है, उसका नाम क्षणिक उपादान है। तो क्षणिक उपादानवाला, क्षणिक उपादान को ज्ञान का ज्ञेय बनाता है| और नैमित्तिकवाला को कर्ता का कर्म बन जाता है|

बाबूजी साहब कहते हैं, फरमाते हैं, कि बहुत ही बढ़िया बात है| समझे? आहाहा! कोटा के

(ऊँचे) विद्वान हैं, समझे? अध्यात्म का रस है बहुत पुराना। वो कहते हैं कि, आहाहा! बढ़िया बात है। फिर से। फिर से, अपने को कहाँ जल्दी है? टाइम भी बहुत है| टाइम भी अभी बहुत है। आहाहा!

सारे जगत में कोई निमित्त नहीं है| एक दफे तो निमित्त को भूल जा| सब उपादान है, ये निश्चय से बात करता हूँ हो। व्यवहार से निमित्त है, तो व्यवहार पूरा ही अभूतार्थ है| व्यवहार पूरा ही अभूतार्थ है। एक दफे ऐसा हुआ, गुरुदेव की हाजरी में बनाव बना, गुरुदेव की हाजरी में ऐसा बनाव बना, कि गुरुदेव ने कहा कि ये कर्म है ना आठ प्रकार का कर्म, वह ज्ञेय है, निमित्त नहीं है| समझे? तो अज्ञानी जीव ने हल्ला मचा दिया, कि नहीं आठकर्म का नाम ज्ञेय नहीं है, निमित्त है| समझे? तो आठ कर्म सब इकट्ठा हुए| उसकी सभा भरी कि, भाई! सचमुच अपना नाम निमित्त है कि अपना नाम ज्ञेय है? है क्या? तो कोई विद्वान परमाणु था ना, तो उसने कहा कि सचमुच अपना नाम तो ज्ञेय है। तो यह निमित्त कहाँ से आया? कि अज्ञानी जीव ने हमारा नाम बिगाड़ दिया है| समझे? तो अभी क्या करें? कि यह सोनगढ़ का संत तो ज्ञेय कहते हैं, और सोनगढ़ के संत ज्ञेय कहते हैं, उनको माननेवाले संख्या में कम हैं, ज्यादा तो मानते नहीं, तो उसका क्या करना चाहिए? समझे? तो प्रतिपक्षवाला कहते हैं कि सोनगढ़ का हमको मान्य नहीं है, तुम सीमंधर भगवान के पास जाओ। तुम्हारी शक्ति तो है। वहाँ से फैसला लाओ। तुम्हारा नाम ज्ञेय है या निमित्त? समझे?

तो पाँच प्रतिनिधि गए, वे तो एक समय में वहाँ पहुँचते हैं, ऊर्ध्वगमन तीव्र गति से गमन करें, तो लोक के आगे तो जाता है ना, इतनी शक्ति है, क्रियावतीशक्ति से जाता है| आहाहा! कोई उसको ले जाता नहीं, उसमें कोई निमित्त नहीं है, धर्मास्तिकाय तो निमित्त मात्र है, निमित्त नहीं है| निमित्त अलग और निमित्तमात्र अलग होता है| शाबाश! तो वहाँ गए और सीमंधर भगवान के पास ये पाँच परमाणु खड़े हुए, वे तो त्रिकालवेता है ना। उन्होंने कहा कि यहाँ तक आपने धक्का क्यों खाया? यहाँ तक क्यों आये? हमारी ब्राँच ऑफिस तो वहाँ है सोनगढ़ में, वहाँ पूछ लेना था। कि साहब हम (आपकी) ब्राँच ऑफिस में तो गए और ब्राँच ऑफिसवाला तो कहता है कि तुम्हारा नाम निमित्त नहीं है, अज्ञानी ने बिगाड़ दिया है, तुम्हारा नाम तो ज्ञेय है| अच्छा तो वहाँ से फैसला करके इधर आये, तो (जो) नहीं मानता है उसको मैंने बात की। अच्छा भैया! जो सीमंधरभगवान ने ज्ञेय कहा, तो हम को मंजूर है। समझे? तो सारे जगत की अंदर, जिसको ज्ञान प्रगट होता है, उसको आठ कर्म ज्ञेयरूप दिखता है| अज्ञानी को निमित्तरूप दिखाई देता है| आहाहा!

ऐसे जगत में एक दफे निमित्त मत देख, निमित्त देखने से नैमित्तिक राग उत्पन्न होता है और राग का कर्ता तू बन जाता है| निमित्त नहीं है, तो नैमितिक भी नहीं है| राग तो है, राग तो है, तो राग नैमितिक है कि क्षणिक उपादान है? कि क्षणिक उपादान है| तो उपादान स्वशक्ति को कोई करनेवाला नहीं है, उपादान कर्ता तो अपने आप है, समझे? उसमें कोई निमित्त की जरूरत नहीं है| पहले यह नक्की कर कि भूतार्थनय से पर्याय स्वतंत्र सत है| क्षणिक उपादान से देख तो कर्ताबुद्धि छूट जाती है, अकर्ता ऐसा स्वभाव में आ जाता है और ज्ञान प्रगट होता है तो ज्ञान का ज्ञेय बन जाता है| क्षणिक उपादान ज्ञान का ज्ञेय बन जाता है, कर्ता का कर्म नहीं बनता है| तो कर्ता की बात है ही नहीं, है तो ज्ञाता ही स्वभाव, तो ज्ञाता के लिए ज्ञाता का ज्ञेय रखो, थोड़े टाइम के लिए, व्यवहार, बाकी कर्ता का कर्म है

नहीं| आज सुना कि बहुत विद्वान आया है, बाहर से, बहुत विद्वान आया है, अच्छी बात है, खुशी की बात है| विद्वान के भाव में जो आवे, समझे तो स्वपर हित का कारण है| आहाहा!

तो आचार्य भगवान फरमाते हैं कि होने योग्य होता है, कोई करनेवाला नहीं है, पुण्य-पाप आस्रव-बंध कोई करनेवाला नहीं है। और आत्मा उपादान कर्ता भी नहीं और निमित्त कर्ता भी नहीं है| उपादान कर्ता क्यों नहीं है कि पुण्य पाप का परिणाम में तदरूपो न भवति, इसरूप होता नहीं है। क्योंकि पारिणामिक भाव जो है वह त्रिकाल निष्क्रिय है, निष्क्रिय शुद्ध पारिणामीकः वो कषाय पाहुड़ की गाथा है सारी, जयसेन आचार्य भगवान ने वह गाथा ली है, शास्त्र में, निष्क्रिय शुद्ध पारिणामिकः, पारिणामिक भाव तीनों काल निष्क्रिय होता है| आत्मा का स्वभाव पारिणामिक भाव है और पारिणामिक भाव का स्वभाव निष्क्रिय है, वह बंध मोक्ष का करनेवाला नहीं है| जाननेवाला है, इतना कहो तो कहो, सचमुच तो इसका (आत्मका) जाननेवाला है| आहाहा! निष्क्रिय शुद्ध पारिणामिक है, कषायपाहुड़ का श्लोक है सारा, कि बंध मोक्ष का करनेवाला नहीं है। होता है, उसको कौन करे? और न हो उसको कौन कर सके? तो होने योग्य, होने योग्य और विकार करनेवाला निमित्त|

अभी पहले तो भूतार्थनय से जान, स्वतंत्र क्षणिक उपादान है। क्षणिक उपादान से पहले ख्याल कर, बाद में जो विभाव है, वह स्वभाव का आश्रय से होता नहीं है। तो उसके लिए कोई निमित्त होना चाहिए। तो निमित्त कर्ता कौन है? उपादान कर्ता, पर्याय का पर्याय और निमित्त कर्ता कर्म का उदय आदि, उदय-उपशम-क्षय-क्षयोपशम चारों सदभाव, अभाव। (कर्म का) सद्भाव निमित्त और अभाव निमित्त, निमित्त का दो प्रकार है, मगर ये आत्मा उसमें निमित्त नहीं है| आत्मा को कर्ता भी मत देख और आत्मा को निमित्त भी मत देख। कर्ता भी ना देख और कारण भी ना देख। निमित्त का अर्थ - कारण नहीं है, निमित्त का अर्थ कि कारण नहीं है। पर्याय का कार्य पर्याय में होता है, कारण कार्य उसमें है| आत्मा (उसका) कारण नहीं है। निमित्त कारण हो तो नित्य कर्तापना का दोष आ जावे। तो आत्मा तो अनादि का है, तो मोक्ष क्यों नहीं हुआ? यानि मोक्ष का निमित्त कारण भी भगवानआत्मा नहीं है। उपादान कारण भी नहीं है। आहाहा!

यह ज्ञाता की, ज्ञाता की वार्ता चलती है। आहाहा! आत्मा सब ज्ञाता ही है। तीनों काल ज्ञाता है। स्वीकार करता है वह विशेष अपेक्षा से ज्ञाता हो जाता है| जैसा ध्यान करता है वैसा हो जाता है| जैसे पाड़ा का ध्यान करे तो? मैं पाड़ा हो गया, ऐसी भ्रांति हो जाती है। पाड़ा होता तो नहीं। उसमें मर्म है| पाड़ा होता तो नहीं है, मगर पाड़ा होने का भ्रम हो जाता है। ऐसे (ही) है तो ज्ञाता, मानता है मैं कर्ता, तो कर्ता की भ्रांति हो गई, कर्ता होता नहीं है। आहाहा! अकर्ता छूटता नहीं है और कर्ता होता नहीं है। आहाहा!

अपूर्व बात है शुद्धआत्मा की वार्ता, ज्ञानानन्द परमात्मा की वार्ता कोई अपूर्व है। जो परमात्मा है, वह पुण्य पाप का परिणाम क्यों करे? समझमें आया कुछ? शुद्धआत्मा अशुद्ध पर्याय को क्यों करे? उसको कोई ज़रूरत क्या पड़ी कि करे, समझे? परमात्मा कोई कार्य करता है? परमात्मा को करनेवाला मत देख| शुभाशुभभाव का करनेवाला मत देख! तेरी दृष्टि विपरीत हो जाएगी और परमात्मा तो करने वाला तो बनेगा ही नहीं, तेरी बुद्धि बिगड़ जाएगी| बुद्धि बिगाड़ जायेगी मगर भगवानआत्मा अशुद्ध पर्याय

का करने वाला (नहीं बनेगा)। ज़रूरत क्या है परमात्मा को? बताओ मेरे को, ज़रूरत हो तो काम करे| बताओ मेरे को, परमात्मा पुण्य-पाप को क्यूँ करें? दलील दो। पुण्य पाप को क्यूँ करे? धीरज! समझ में आया? ये परमात्मा है तो परमात्मा पुण्य पाप क्यूँ करें? पाँचमहाव्रत का परिणाम परमात्मा नहीं करता है और मेरा मुनिराज भी नहीं करता है। वो तो जानता है। आ अंदर परमात्मा जणहण ज्योत विराजमान है। सिद्ध समान सदा पद मेरो| आहाहा! अपूर्व बात है। बराबर। परमात्मा को कोई ज़रूरत पड़े तो, तो पुण्य पाप का परिणाम करे। उसको क्या ज़रूरत पड़ती है?

अच्छा| तो पुण्य पाप नहीं करता है तो रहने दो, मगर संवर, निर्जरा तो करे कि नहीं? आहाहा! क्या वो शुद्धता से अपूर्ण है तो पुष्टि के लिए कुछ संवर, निर्जरा करे? और संवर, निर्जराजन्य आनंद का भी भोगता नहीं है क्यूँकि आनंदमूर्ति है आत्मा। आहाहा! भगवानआत्मा आनंद का भी कर्ता नहीं है और भोकता नहीं है। आहाहा! क्या कहा? परमात्मा अंदर विराजमान है हो! परमात्मा को तो देखो तो अकारक, अवेदक आत्मा का भान ने ज्ञान हो जाता है। ज्ञाता होता है मगर करनेवाला होता नहीं। ज़रूरत क्यूँ पड़ी संवर, निर्जरा करने की? जो शुद्धता की कमी अंदर हो गयी क्यूँकि अनंत, अनंतकाल गया तो, पर्याय में मिथ्याज्ञान, मिथ्यादर्शन, मिथ्याचारित्र हुआ, तो थोड़ा आत्मा अपूर्ण हो गया, पूर्ण शुद्ध नहीं रहा। ऐसा नहीं है? (नहीं है|) अच्छा। तो नहीं है तो शुद्धपर्याय को क्या करें? ज़रूरत क्या बताओ मेरे को! ये तो न्याय की बात है। आहाहा! ऐसी बात अंध-श्रद्धा का विषय नहीं है। लोजीक से न्याय से बराबर सिद्ध हो सकता है। ज़रूर क्यूँ की करें? हाँ, संवर, निर्जरा होता है ऐसा रखो मगर कर्ता है वो अभी छोड़ दो भैय्या| वक्त (समय) आ गया है समझने का, तू ज्ञाता है कर्ता नहीं है।

अच्छा मोक्ष का कर्ता है की नहीं? मोक्ष का कर्ता? क्यूँ करें? वो अपूर्ण है, भगवानआत्मा अपूर्ण है की मोक्ष करें? केवलज्ञान करें? केवलज्ञान होता है उसको जानता है। मगर करनेवाला नहीं है। आहाहा! ऐसे होने योग्य पर्याय अपनी योग्यता अनुसार प्रगट होती रहती है, कोई करनेवाला है नहीं। आत्मा को जानते जानते उसको ज्ञेयरूप से जानता है ज्ञान| आहाहा! मगर करना आत्मा का स्वभाव भैया नहीं है। परमात्मा को कर्ता देखना उसका नाम मिथ्यात्व है। क्या कहा? परमात्मा को मोक्ष पर्याय का कर्ता देखना वह मिथ्यात्व है ऐसा पाठ है परमात्मप्रकाश में। परमात्मप्रकाश में शिष्य ने प्रश्न किया की साहब आप बंध का कर्ता न कहो तो न कहो मगर मोक्ष का कर्ता तो आत्मा है कि नहीं?

ण वि उप्पज्जइ ण वि मरइ बंधु ण मोक्खु करेइ ।

जिउ परमत्थेँ जोइया जिणवरु एउँ भणेइ ॥६८॥

बंध, मोक्ष का कर्ता, शिष्य ने प्रश्न किया कि बंध का कर्ता न हो तो न हो, मगर मोक्ष का कर्ता है कि नहीं? कि सुन! जो मोक्ष का करनेवाला है तो बंध का अभावपूर्वक मोक्ष होता है, तो मोक्ष का करनेवाला है तो बंध का करनेवाला अपने आप सिद्ध हो गया। ऐसा तीन काल में बननेवाला नहीं, इसलिए मोक्ष का कर्ता भी नहीं है। अपूर्व चीज़ है। आहाहा! परमात्मा को क्या ज़रूर पड़े मोक्ष करने की? वो तो मोक्ष स्वरूप है, प्रथम से ही मोक्ष स्वरूप है। अपूर्ण हो तो करें, मगर पूर्ण परमात्मा छलोछल ज्ञानानन्द से भरा है। आहाहा! छलोछल है। सुखसागर, ज्ञानसागर उसका नाम है। सुखसागर और ज्ञानसागर उसका

नाम है। रागसागर नहीं है। दुखसागर नहीं है। आहाहा!

परमात्मा को कर्ता मत देख। परमात्मा को ज्ञाता देख। आहाहा! तो तेरे को आनंद आ जाएगा। परमात्मा को, निज परमात्मा को कर्ता देखना वो तो मिथ्यादर्शन, मिथ्याज्ञान, मिथ्याचारित्र है ऐसा स्वरूप है नहीं। जीव तत्व ऐसा है नहीं।

तो होने योग्य और विकार करनेवाले निमित्त का ज्ञान कराया। पहले क्षणिक उपादान देख, बाद में करनेवाला निमित्त कर्ता कौन है, भगवानआत्मा निमितकर्ता नहीं है तो निमित्तकर्ता दूसरी एक चीज़ है। तो वो पहले क्षणिक उपादान से देख। बाद में ये करनेवाला निमित्त कर्ता है तो वो नैमित्तिक हो गया। निश्चय व्यवहार, एक समय की पर्याय में निश्चय व्यवहार का ज्ञान हो गया। फिर से। क्या कहा? क्षणिक उपादान देखे तो वो पर्याय का ज्ञान निश्चयनय से देखा। और कर्म सापेक्ष से देखो तो नैमित्तिक व्यवहार हो गया। आहाहा! निरपेक्ष और सापेक्ष का ज्ञान, ज्ञानी को होता है। निरपेक्ष और सापेक्ष का ज्ञान, अज्ञानी को होता नहीं। है? एक ही सापेक्ष ही मानता है, कर्म का उदय से राग होता है। कर्म का उदय से राग होता है, आहाहा! याने पर्याय को पराधीन मान लिया उसकी दृष्टि विपरीत हो जाती है। भैया! क्या करें? तीव्र क्रोध का उदय आया तो क्रोध हो गया। आहाहा! और शास्त्र में भी वो आता है उदयपूर्वक होता है। अरे भैया! व्यवहारनय का निमित्त का ज्ञान कराया है, उसका कर्ता बननेवाला नहीं है भैया तू। शास्त्र का मर्म भी जानते नहीं है।

विकारी होने योग्य और विकार करनेवाला दोनो पुण्य और पाप है। एक व्यवहार जीव, जीव ने अजीव, जीव का परिणाम और एक अजीव का परिणाम, पहले दो को भिन्न जानना। दोय उपादान है। अजीव भी उपादान और विकार भी उपादान है। दोय को उपादान देख निश्चय। बाद में उसको निमित्त और इसको नैमित्तिक, व्यवहार का ज्ञान हो गया। व्यवहार का ज्ञान हो गया। निश्चय के ज्ञान के साथ-साथ व्यवहार का ज्ञान होता है मगर व्यवहार का पक्ष होता नहीं है।

आस्त्रव होने योग्य और आस्त्रव करनेवाला। होने योग्य बस! महासिद्धांत है। परिणाम होने योग्य होता है। आत्मा उसको जानता है करनेवाला नहीं है। आहाहा! कर्ताबुद्धि का नाम संसार है। आहाहा! चोखा (साफ़) संसार है। मैं करनेवाला, अहंकार हो गया आहाहा! सब मेरे से होता है। एक दफे ऐसा हुआ कुत्ता है न कुत्ता, गाड़ा (बैलगाड़ी) नीचे चलता था, गाड़ी, बैलगाड़ी। तो माथा ज़रा ज़रा उसमें भटकाता था। तो मेरे से बैलगाड़ी चलती है। उसमें उसको ख़ंजोल (खुजली) आया। क्या? खुजली - खुजली आया तो रुक गया। रुक गया तो बैलगाड़ी तो चलने लगी। ये क्या है? मेरे से चलता है, मैं रुक गया तो उसको रुकना चाहिए। विचार करते करते करते अहंकारबुद्धि छूट गयी। वहीं के वहीं कुत्ते को सम्यकदर्शन हो गया। अहंकार छूटा, कर्ताबुद्धि छूटा तो ज्ञाता में आ गया।

"हुं करुं, हुं करूँ, ए ज अज्ञानता" अन्यमति हो गया, वोह तो ईश्वर का कर्तावादी, अपने को तो सार ग्रहण करना है।

हुं करुं हुं करुं ए ज अज्ञानता, शकटनो भार जेम श्वान ताणे।
सृष्टि मंडाल एणी पेरे कोई योगी, योगीश्वरा जाणे।।

सृष्टि की रचना याने पर्याय की रचना अपने आप होती है, ऐसे कोई योगी साधक योगीश्वर

परमात्मा जानता है। बाक़ी अभिमानी जीव जानता नहीं है। मैं करूँ मैं करूँ मर गया| आहाहा! मैं करूँ उसमें मरता है, भाव मरण है। आहाहा! दोनो आस्त्रव है। संवररूप होने योग्य सम्यकदर्शन, ज्ञान, चारित्र का परिणाम होने योग्य प्रगट होता है। उसका नाम संवर होने योग्य, धर्म का परिणाम होने योग्य होता है। उसका उपादान कर्ता आत्मा नहीं, निमित्त कर्ता भी आत्मा नहीं है। उसमें जूना कर्म, ये निमित्त कारण है, सबमें जूना कर्म लेना, नया कर्म की बात इसमें नहीं है। क्यूँकि जूना कर्म सद्भाव और अभाव निमित्त होता है। नया कर्म तो बंधता ही नहीं है। आहाहा! क्या कहा? अलौकिक बात है।

संवर, निर्जरा करनेवाला दोनो संवर है। थवा योग्य, होने योग्य संवर और करनेवाला निमित्त कारण। पहले उपादान से देख बाद में निमित्त कारण से नैमित्तिक को देख। निर्जरा होने योग्य, भाव निर्जरा का दो प्रकार है। शुद्धि की वृद्धि का नाम संवर का नाम, शुद्धि की प्राप्ति उपलब्धि उसका नाम संवर है। निर्जरा का नाम शुद्धि की वृद्धि अस्ति से, नास्ति से अशुद्धि की हानि और निमित्त से देखो तो कर्म की निर्जरा होती है। निर्जरा होने योग्य होती है। आहाहा! आनंद की वृद्धि होने योग्य होती है। आत्माने पुरुषार्थ किया तो आनंद बढ़ गया। कैसा पुरुषार्थ किया? कि मैं करनेवाला नहीं हूँ, मैं तो मेरे को जाननेवाला हूँ। ऐसा पुरुषार्थ में शुद्धि की वृद्धि बढ़ जाती है। आहाहा!

आत्मा में जब एकाग्र होता है आत्मा तब अपनेआप आनंद की वृद्धि होती है। करने से? करनेका तो (जब) चौकड़ा लगावे, आहाहा! तब काम होवे। चोकड़ा, मींडा नहीं। मींडा में तो क्या होता है शून्य में से एकड़ा (एक) हो जाता है। ऐसा होता है ने बिंदु (०) तो ऐसे खींचे तो एकड़ा हो जाता है मगर चोकड़ा (cross) में से एकड़ा नहीं होता। क्रॉस, उसमें से एकड़ा होता नहीं। चोकड़ा लगाना चाहिए। आहाहा! हमारे प्रेमचंदजी बहुत कहते है कि पहले चोकड़ा लगाओ कि कर्ता नहीं हूँ। मैं ज्ञाता हूँ। ज्ञाता बनकर समयसार की कथनी जो पढ़ता है और श्रवण करता है उसका काम बन जाता है। कर्ता का शल्य रखकर जो सुनता है, ये ज्ञानी तो कहे मगर करना तो चाहिए। किये बिना दाल का व्यापार कहाँ से आवे? नहीं तो सारा कुटुम्ब भूकें मर जावे। समजे? अच्छा! तू खिलाता है? अच्छा! क्या अभिमान हो गया तेरे को? ये दाल का व्यापारी है, समजे? संध्या के पिताजी की बात, घर के आदमी का नाम देवे, अन्यथा किसीको गुस्सा हो जावे। समझ गए? भैया, ये तो नाम की बात नहीं है, तत्व की बात है। किसी की टीका टिप्पणी की बात इदर नहीं है| बाहर में बोर्ड लगा है। यह आत्मकथा, धर्मकथा का स्थान है। विभाव कथा इधर है नहीं। पर की कथा का सख़्त मना है। बाहर बोर्ड मैंने तो पढ़ा। मैंने तो पढ़ लिया| आहाहा! इधर विकथा करने की तो सख़्त मना है। स्वकथा की बात है इधर तो, आहाहा! आत्मकथा!

निर्जरा होने योग्य और निर्जरा करनेवाला। आहाहा! जूना कर्म खिरता है ने, इधर शुद्धि की वृद्धि होती है, दोनो निर्जरा है। आहाहा! एक भाव निर्जरा और दूसरा द्रव्य निर्जरा, ऐसे सब में लगा लेना। भाव पुण्य, द्रव्य पुण्य, भाव पाप, द्रव्य पाप। ऐसे दो में लगा लेना। बंधन करने योग्य और बंधन करनेवाला। बंधने योग्य और बंधन करनेवाला। राग उत्पन्न होता है उसमें उसका उपयोग जुड़ जाता है। राग का योग, उसका नाम भावबंध है। राग उतपन होता है, उसमे उसका उपयोग जुड़ जाता है, राग का योग, उसका नाम भावबंध है। राग का योग, उसका नाम भावबंध है। राग की एकत्वबुद्धि उसका नाम भावबंध है। भावबंध होता है क्षणिक उपादान से होता है। मिथ्यात्व का परिणाम का करनेवाला आत्मा को मत देख,

आत्मा जो मिथ्यात्व का परिणाम करनेवाला है तो मिथ्यात्व छूटेगा ही नहीं। मिथ्यात्व तो छोड़ना है सबको। मगर अभी तो मैं मिथ्यात्व का करनेवाला हूँ! मैं परमात्मा हूँ ऐसा भाव क्यूँ नहीं आता है? मैं तो परमात्मा हूँ! कभी? तीनोकाल! अभी भी। आहाहा! वो परिणामको परिणाम में रहने दो मैं तो ऐपरिणामी हूँ। आहाहा! सोगानीजी का वाक्य है। परिणाम को परिणाम में रहने दो। कौन ना बोलता है? परिणाम की अस्ति, मगर मेरे में नास्ति, ऐसी मेरी अस्ति है, उसका अनुभव उसका नाम मस्ती है। हाँ, अस्ति की मस्ती! आहाहा! परिणाम की ना नहीं बोलता है। उत्पाद व्यय है। उत्पाद-व्यय-ध्रुव युक्तं सत्। गुण-पर्याय वत द्रव्यं। कौन ना बोलता है? जीव का असाधारण पाँच भाव है, है सब है, मगर इसमें मैं कौन हूँ? ढूँढ ले। नवतत्व में मैं कौन हूँ? पाँच भाव में मैं कौन हूँ? आहाहा! वो ढूँढने से दृष्टि निर्मल हो जाती है। विपरीत दृष्टि छूट जाती है।

निर्जरा करनेवाला दोनों निर्जरा है, और मोक्ष होने योग्य, देखो! मोक्ष होने योग्य होता है। मोक्ष करने से होता नहीं है। अपना परमात्मा सीमंधर प्रभु विराजमान है, उसका अनंत वीर्य प्रगट हो गया है। मोक्ष क्यूँ करते नहीं है? के करनेवाला नहीं है, करनेवाला नहीं है जाननेवाला है। करनेवाला नहीं है। मैं तो जाननहार हूँ। मैं करनेवाला नहीं हूँ। महामंत्र है। महामंत्र है। आहाहा! ये अनंत तीर्थंकर भगवंतो ने कहा कि आत्मा का स्वभाव जाननहार है। करनार नहीं है। आहाहा! मोक्ष होने योग्य होता है।

इधर १३वाँ तीर्थंकर परमात्मा इधर जब होगा ने तब उसका (सीमंधर स्वामी का) मोक्ष होगा। दूसरा क्या कि सीमंधर नाम रहेगा, जीव उसमें बदल जाएगा। नाम बदलता नहीं है। ऐसा बीस तीर्थंकर है न, तो उनका नाम भी शाश्वत। जैसे लोक में कहावत है, नाम उसका नाश, नाम उसका नाश| आत्मा तो अविनाशी है। मगर वहाँ नाम भी शाश्वत है। देखो कुदरत की गति तो देखो। अभी सीमंधर भगवान है अरिहंत पद में और तीन सीमंधर लाइन में खड़ा है। एक का जन्म हो गया है। एक कुंवर अवस्था में है, एक मुनि अवस्था में है। मुनि (अरिहंत) अवस्था में जो अभी सीमंधर भगवान है उसका मोक्ष होगा तब उसको (मुनि को) अरिहंत पर्याय प्रगट होगी। ऐसा अनादि का क्रम है। बीस का नाम शाश्वत है, बाक़ी नया नाम होता है। आहाहा!

मोक्ष होने योग्य तथा मोक्ष करनेवाला। आहाहा! मोक्ष होने योग्य तो उपादान है। पहले उपादान से देख। निमित्त से मत देख। वो ये उपादान देखेगा तो कर्म भी ज्ञेयरूप देखेगा, ऐसा नक्की करके, निश्चय बाद में व्यवहार, निमित्त कौन के कर्म का अभाव। उसका नाम नैमित्तिक है। मोक्ष होने योग्य, आहाहा! होने योग्य तो अमृत कथन है। सब होने योग्य होता है। सब जड़ चेतन का परिणाम, धारावाही, क्रमबद्ध पर्याय से होने योग्य होता है। अविरतपणे। कोई करनेवाला नहीं। आत्मा उसको जाननेवाला है। जो जानता है वो ज्ञानी होता है और मैं कर्ता हूँ ऐसा मानता है तो अज्ञानी होता है। आहाहा! एक समय के लिए अज्ञानी है। अज्ञानी का काल लम्बा नहीं है। अज्ञान का काल लम्बा नहीं है। समय एक है और धरावाही देखो तो कोई लम्बा काल नहीं है। क्या कहा? आहाहा!

एक दफे सोनगढ़ की बात २५ साल पहले की बताता हूँ। ये भाईसाहब वह बस स्टैंड पर आया छोड़ने के लिए। मैंने कहा प्रेमचंदजी पानी तो उष्ण हो गया ठीक है? तो उष्णता का काल तो ज़्यादा नहीं है, ठंडा हो जाएगा, क्यूँकि उसका स्वभाव उष्ण नहीं है। स्वभाव शीतल है, तो शीतल हो जाएगा। ऐसे

मिथ्यात्व की पर्याय, अज्ञान की पर्याय एक समय के लिए है। थोड़ा काल लम्बा हो, किसी को लम्बा, तो भी ऐसे ऐसे देखो देखो, आहाहा! तो ये अनादि अनंत नहीं दिखती है। अज्ञान की पर्याय, अनादि सांत दिखेगी। आत्मा पर लक्ष करके देखो तो वो पर्याय का ज्ञान अभी हो जाता है| क्या कहा? मेरे में भव नहीं है| आहाहा! ऐसा ज्ञान में आ जाता है।

बुख़ार आया शरीर में, है? ये डॉक्टर बैठा है। तो कितना (दिन)? तीन दिन, चार दिन, बस आठ दिन में तो उतर जाता है। वो विभाव है। बुख़ार है वो विभाव है ने, तो विभाव है ने तो उसकी मर्यादा, काल मर्यादा टेम्परेरी होती है और स्वभाव की मर्यादा नहीं है, स्वभाव तो अनादि अनंत रहता ही है। आहाहा! मोक्ष होता है वो पर्याय का स्वभाव है। पर्याय का स्वभाव भी सादि अनंत है। हुआ मोक्ष पर्याय और अनंत अनंत अनंत काल मोक्षकी पर्याय आएगा। उसमें विभाव बीच में आता नहीं है। पर्याय का स्वभाव भी ऐसा है, हाँ तो द्रव्य का स्वभाव की बात क्या करे? द्रव्य दृष्टि हो गयी तो अल्पकाल में मुक्ति होनेवाली है| एक वखत का काम है। दर्शन करो एक आत्मा का, प्रथम आत्मा को जानो। प्रथम क्या करना? कि आत्मा को जानना।

मोक्ष होने योग्य और मोक्ष करनेवाला, दोनो मोक्ष है। एक भावमोक्ष और एक द्रव्यमोक्ष। दो की मुक्ति हो गयी। क्या कहा? परमाणु को भी छुट्टी मिल गयी। कार्माणवर्गणा से सामान्य परमाणु रह गया उसकी मुक्ति और इधर पर्याय की मुक्ति। मैं तो त्रिकाल मुक्त हूँ| आहाहा! मैं बंधा ही नहीं हूँ। मुक्त होने वाला मेरा स्वभाव नहीं है। सब अदल बदल होता है पर्याय में होता है। पर्याय का अदल बदल से मेरे में कुछ ज़्यादा कम हो जावे तीनकाल में होनेवाला नहीं। मैं तो परमात्मा हूँ। आहाहा! परमात्मा का ध्यान करने से आत्मा परमात्मा हो जाता है। परमात्मा का ध्यान करता है ने, जैसा ध्यान करता है ने ऐसा वो हो जाता है। ऐसा नियम है। सचमुच तो ध्यान भी सहज होता है मगर उपदेश बोध में ऐसा कहा जाता है कि आत्मा का ध्यान करो! आहाहा!

मोक्ष होने योग्य, मोक्ष करनेवाला, दोनों मोक्ष है, क्यूंकि? क्यूंकि एकके ही अपने आप पुण्य, पाप, आस्त्रव, संवर, निर्जरा, बंध, मोक्ष की उपपत्ति नहीं बनती। एकेला एकेला आत्मा राग रूप से परिणमणता है ऐसा बनता नहीं| राग होता है तब दूसरा पदार्थ उसमे निमित्त होता है। ऐसे संवर, निर्जरा, मोक्ष होता है तो उसमें दूसरा पदार्थ निमित्त पड़ता है। क्यूँकि वो निमित्त सापेक्ष से नैमित्तिक है मगर निमित्त निरपेक्ष से तो वो क्षणिक उपादान है। क्षणिक उपादान का दो भेद है, एक शुद्ध और एक अशुद्ध। त्रिकाल उपादान तो त्रिकाल शुद्ध है। उसमें दो भेद नहीं है। पर्याय के अंदर दो भेद है। द्रव्य के अंदर भेद है नहीं। अभेद में भेद है ही नहीं। अभेद में भेद है ही नहीं। भेद भेद में, अभेद अभेद में। एकेला एकेला उपपती सिद्धि नहीं बनती। ये दोनो जीव और अजीव है, जीव याने व्यवहार जीव। ये ख़याल रखना, जीव याने व्यवहार जीव और एक दूसरा निमित्त अजीव। जीव और अजीव दो का पर्याय के अंदर निमित्त नैमित्तिक सम्बंध बनता है। भगवानआत्मा कर्म का उदय में अवलम्बन करता ही नहीं है, क्यूँकि वो तो निरावलंबी तत्व है। अवलम्बन करता है वो अनात्मा है। अवलम्बन करनेवाला मैं नहीं हूँ। मैं तो परमात्मा हूँ न? मैं किसका अवलम्बन करूँ? आहाहा! परिणाम अवलम्बन करता है और परिणाम में थकावट होती है तो अवलम्बन उसका छोड़ता है और मेरा अवलम्बन करता है, तो मेरा अवलम्बन करता है तो उसकी योग्यता से शुद्धि

प्रगट होती है। मैं शुद्धि का दान देता नहीं हूँ। अलौकिक बात है। कर्ताबुद्धि छुड़ाने की बात है। भूतार्थ से पर्याय को जान तो कर्ताबुद्धि छूट जाएगी। आहाहा!

वे दोनो जीव और अजीव है। व्यवहार जीव उपादान, नैमित्तिक सामने निमित्त अजीव। अर्थात् उन दो में से एक जीव है दूसरा अजीव। निमित्त नैमित्तिक सम्बंध दो द्रव्य के बीच में नहीं होता है। दो द्रव्य की पर्याय के बीच में क्षणिक निमित्त नैमित्तिक सम्बंध बनता है मगर निमित्त नैमित्तिक सम्बंध दो के बीच में अकर्तापने की सिद्धि करता है। भाईसाब! दो द्रव्य के अंदर निमित्त नैमित्तिक सम्बंध नहीं है। दो द्रव्य की पर्याय के बीच में निमित्त नैमित्तिक सम्बंध होने पर भी कर्ताकर्म सम्बंध का तो अभाव है। कर्ता कर्म सम्बंध जो हो जाए तो दो द्रव्य नहीं रहता है। एक द्रव्य बन जाता है। निमित्त नैमित्तिक सम्बंध बनने पर भी कर्ता कर्म सम्बंध नहीं है। आहाहा! याने अकर्ता ही है। वहाँ भी यही आया। फिर फिर से वो ही आता है, वो ही आता है, ये है सो आता है। सही है? अच्छा अच्छी बात है। बस ऐसे ऐसे कहे, थोड़ा सा तो मेरे को अच्छा लगे। क्या मेरे को अच्छा लगे। (उत्साह बिना का) तो मेरे को नहीं अच्छा लगे।

हमारे वहाँ ऐसा है कि एरड़िया होता है न। एरड़िया (castor oil) पीए तो मुँह बिगड़ जाता है समझे? ऐसे मुँह नहीं बिगाड़ना, प्रफुल्लित होना। आत्मा की बात है न। ये तो अपने आत्मा की बात है। आहाहा! सब प्रफुल्लित है। जितनी मात्रा में समझ में आता है, इतनी मात्रा में आत्मा प्रति आदर और अपेक्षित हर्ष आ जाता है। अंदर में से, आहाहा! ऐसा मेरा स्वरूप है। ऐसा मेरा स्वरूप है। मोक्षमार्ग प्रकाशक में लिखा है न? ये बात तो मैंने कभी (सुनी ही नहीं). आहाहा! मेरी बात है। आहाहा! विकथा की तो सख़्त मनाई है बोर्ड है। प्रमुख साब प्रमुख साब बैठा है न इधर, इधर। विकथा की सख़्त मना ही है। आत्मकथा, धर्मकथा का ये स्थान है। आहाहा! दोनो जीव और अजीव है। अर्थात् उन दोनो में एक जीव और दूसरा अजीव है। पहला पारा पूरा हो गया अभी दूसरा पारा चलेगा।

ॐ

Version 1: http://AtmaDharma.com or http://AtmaDharma.org Please report errors to rajesh@AtmaDharma.com